अध्याय दूसरा

भगवतीचरण वर्मा के समय की परिस्थितियाँ

१ - राजनीतिक ,
२ - सामाजिक,
३ - धार्मिक ,
४ - आर्थिक ।

अध्याय - दुसरा -

" भगवतीचरण वर्माजी के समय की परिस्थिति -- "

साहित्य की निर्मिती निश्चित ही युगीन परिस्थितियों की उपज होती है। चाहे वह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रुपमें क्यों न हो यह परिस्थितियाँ ही साहित्यिक विधा एवं साहित्यकार-दोनों को प्रभावित करती रहती हैं। उपन्यास साहित्य विधा में यह संभावना सबसे अधिक रहती है। फलत: उपन्यासकार अपनी कृति में अपने काल-विशेष के जन-जीवन से सम्बन्धित किसी न किसी समस्या को उठाता है। इस समस्या के चित्रण में उसे कहाँ तक सफलता मिलती है - इसके सम्यक अध्ययन के लिए तत्कालीन जन-जीवन से अवगत होना आवश्यक हो जाता है। तत्कालीन युग की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों के अध्ययन से, जन-जीवन तथा उनकी समस्याओं को आसानी से समझा जा सकता है। अत: कृतिकार या कृति के यथार्थमूल्यांकन के लिए युगीन परिस्थितियों का अध्ययन आवश्यक बन जाता है।

भगवतीबाबू के उपन्यासों में बीसवीं शताब्दी के विराट जन - जीवन का चित्रण हुआ है। वर्माजी की सर्जनात्मक चेतना तत्कालीन परिवेश से बोखला उठी थी। इतिहास के इस कालखण्ड में भारत का " स्वाधीनता आन्दोलन " विश्व को चकित कर देनेवाली घटना थी। जहाँ एक ओर यह " स्वाधीनता - आन्दोलन " भारत को राजनीतिक स्वतंत्रता दिलाने में प्रयत्नशील था, तो दुसरी ओर वह सामाजिक समस्याओंसे होकर गुजर रहा था। नारी - शिक्षा, पर्दा-प्रथा, अछूतोध्दार, हिन्दुमुस्लिम संघर्ष, जाति-प्रथा

आदि अनेक समस्याओं से भारतीय समाज उलझा हुआ था । भगवतीबाबू ने इन सारी समस्याओं को नजदीक से देखा, अपने समय की गतिविधियों को पहचाना और अपनी कृतियों में उनका स्वाभाविक चित्रण किया । उनकी कुछ कृतियाँ तो पूरी तरहसे राजनीतिक समस्याओंपर ही आधारित हैं। अत: यह क्रम प्राप्त होता है कि, वर्माजी के समय की - राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों का आकलन हमें हो ।

राजनीतिक परिस्थितियाँ --

बीसवी-शताब्दी का काल भारत के राजनीतिक इतिहास में अत्यंत महत्वपूर्ण है । इस काल के आरंभ में देश में चारोतरफ निराशा का वातावरण छाया हुआ था । क्योंकि १९वी शताब्दी के उत्तरार्ध में सन १८५७ का प्रथम 'स्वाधीनता संग्राम' विफल हो चुका था । कंपनी के हाथ से देश का सूत्र सम्राट के अधिन ब्रिटिश मंत्रीमण्डल के हाथ में चला गया था । इस काल की प्रमुख घटना थी, लॉर्ड डलहौसी की 'लैप्स नीति'। रानी व्हिक्टोरिया के शासन काल में तो देश की अपार संपत्ति की लूट हुई । भारतीय जन-साधारण उसमें कोई राह न पाकर अनिश्चितता का जीवन जी रहा था । सन १८८५ में इंडियन नॅशनल काँग्रेस की स्थापना हुई । आरंभ में काँग्रेसी नेताओंने वैधानिक सुधारोंकी माँग की । परंतु लॉर्ड कर्जन ने किये बंगाल-विभाजन, लोकमान्य तिलक के स्वराज्य प्राप्ति आन्दोलन, श्रीमती एनी बेझेंट के होमरुल-आन्दोलन ने काँग्रेस में प्राण डाल दिये । जिससे सोया हुआ भारत पुन: जाग उठा, देश में एक हलचल सी पैदा हुई । लोकमान्य तिलक और महात्मा गांधी राजनीतिक चेतना के अगुआ थे। जिनके आगमन से राष्ट्रीय चेतना में विकास हुआ । निराशा का घोर तमसाच्छान वातावरण-ज्योतिर्मय पुँज से विदीर्ण हो उठा । भारतीयों में नवीन चेतना संचारित हो उठी ।

सन १८८५ से १९०५ तक कॅाँग्रेस का कार्य शांतीपूर्ण समझौता तथा विश्वास का ही रहा । "कॅाँग्रेसीयों के दिलों में कभी कुछ उत्तेजना और रोष के भाव आ गए हों, पर इसमें कोई शक नहीं, कि सन १८८५ से १९०५ तक कॅाँग्रेस की जो प्रगति हुई, उसकी बुनियादी थी वैध आन्दोलन और अंग्रेजों की न्यायप्रियता के प्रति उनका दृढ अटल विश्वास ही । "[१] तत्पश्चात लॅार्ड कर्जन का दमन नीति का शासन चला । बंगाल विभाजन के प्रश्नपर देशव्यापी आन्दोलन छिडा और यह निर्णय वापस लिया गया । इसी बीच एक और महत्वपूर्ण घटना भारत के राजनीतिक मंचपर आ गयी । वह यह, कि आगाखान के नेतृत्व में 'मुस्लिम लीग' की स्थापना । "सन १९०६ में एच.एच.आगाखान मुस्लिमों का प्रतिनिधि मण्डल लेकर लॅार्ड मंटो से मिले और आगाखान के नेतृत्व में मुस्लिम लीग की स्थापना हुई ।"[२] जिससे पहली बार सांप्रदायिक पृथक नेतृत्व की माँग की गई और यहीं पर भारत विभाजन की नींव डाली गयी ।

जुलई १९१४ ई.में प्रथम महायुध्द शुरु हुआ और सन १९१८ तक चला । भारत ने अंग्रेजों को पूरा साथ दिया । हमारी सेना मित्र-राष्ट्रों के साथ संगठीत होकर जर्मन सेनाओंके छक्के छुडा दिये । मात्र इसके बावजुद भी अंग्रेजोंने १९१९ ई.में दमनकारी नीति को अपनाया 'रोलट बील' देशपर थोप दिया गया । फलस्वरुप राष्ट्रीय चेतनाओर तेज हो उठी । म.गांधीजी ने इसका कडा विरोध किया । "गांधी अब तक कॅाँग्रेस और देश के निर्विवाद नेता माने जा चुके थे। सत्याग्रह को देश में चारों ओर मान्यता प्राप्त हुई और अप्रैल १९१९ से भारतीय इतिहास के नये अध्याय का प्रारंभ हुआ । सत्याग्रह आन्दोलन के समय हिन्दुओं और मुसलमानों ने अद्‌भुत एकता का परिचय दिया । इस एकता पर स्वयं सरकार चकित थी ।"[३] इस समय की भयानक घटना थी, 'जालियनबागवाला हत्याकाण्ड' ।

---

१ डा.पट्टाभि सीतारामय्या - कॅाँग्रेस का इतिहास (पहला खण्ड), पृ.सं.५८
२ डा.एन.वी. राजकुमार - इन्डियन पालिटिकल पार्टीज - पृ.सं.१०२
३ डा.पट्टाभि सीतारामय्या - कॅाँग्रेस का इतिहास - पृ.सं.१२९

नयी - लडाई --

सन १९२० ई.से सन १९४७ ई. तक का समय राजनीतिक दृष्टिसे भारतीय तथा आन्तराष्ट्रीय क्षेत्र में अत्यंत महत्व का काल है। १९२० ई. में लोकमान्य तिलक जी का देहान्त हुआ और कौंग्रेस का नेतृत्व म.गांधीजी के हाथ में आया। १९२० का देशव्यापी असहयोग आन्दोलन, स्वदेशी आन्दोलन, तथा १९३०-३३ ई.के सविनय अवज्ञा आन्दोलन से कौंग्रेस एक मात्र जनप्रिय राष्ट्रीय संस्था सर्व स्वीकृत हुई। भारतीय किसान - नारी वर्ग और मजदूर इसके सक्रिय कार्यकर्त्ता बने।

ब्रिटिश सरकार से मोर्चा लेने के लिए असहयोग का शंख फूंका गया था। इसमें विदेशी वस्त्रों की होली जलाई गयी, सरकारी नौकरियों तथा विदेशी उपाधियों का बहिष्कार किया गया, स्कूल कौलेजोंका बहिष्कार किया गया। विद्यार्थी-युवकोंपर भी इसका गहरा प्रभाव पडा। अपनी पढाई छोडकर वे आन्दोलन में सहभागी हुये। देशभर जगह जगह आन्दोलन की बाढ-सी आ गयी। ब्रिटिशों की दमनकारी नीति चलती ही रही, आन्दोलन कारियों को जेल में ठूंस दिया गया। चालाकी से अंग्रेजोंने कभी मुसलमानों को हिन्दुओं के खिलाफ, तो कभी हिन्दुओंको मुसलमानों के खिलाफ भडकाने का प्रयास करती रही। पर उसे सफलता नहीं मिली। सारे देश में एक बीजली दौड गई। यह अपने आप में एक नयी लडाई थी। आन्दोलन सफलता की सीमातक पहुँचा ही था, कि `चौरी-चौरा` की भीषण घटना के बाद आन्दोलन स्थगित कर दिया। आन्दोलन अहिंसात्मक थी, गांधीजीने हिंसा देखी और आन्दोलन स्थगित किया। गांधीजी को गिरफ्तार कर छः सालों के लिए जेल भिजवा दिया गया।

इसके बाद अंग्रेजोंने `फूट डालो और राज्य करो` इस विशिष्ट नीति को अपनाकर प्रतिगामी शक्तियों की पीठपर हाथ फेरने लगे। सन १९२२ में

"नरेश संरक्षण बील" लाकर यह प्रचार करना आरंभ दिया, कि भारत के लिए सामंतीशासन प्रणाली ही उपयुक्त है। जिससे भारतीय नरेशों के मन में अंग्रेजी शासन अपने हित की है, यह भावना घर करने लगी। इसी बीच टॅक्स न देने का आन्दोलन छिडा था, जिसमें सरकारने बडी कठोरता से काम लिया था।

म.गांधी के जेल जाने के बाद कुछ कॅांग्रेसी कार्यकर्ता और नेता कौंसिल की तरफ आकर्षित हुए। इनका असहयोग नीतिपर विश्वास नहीं था। उन्होंने 'स्वराज्य पार्टी' नामक एक संस्था की स्थापना की। जिसके अगुआ थे - चित्तरंजनदास देशबंधु तथा मोतीलाल नेहरू। १९२३ के चुनाव में पार्टी को काफी सफलता मिली। वे कौन्सिल प्रवेशकर सरकार की दमन-नीति का विरोध करने में सारी शक्ति लगा दी। परंतु एक दो साल में ही उनके समझ में आया कि यह रास्ता गलत है। और स्वयं पार्टी ही 'कौन्सिल की शतरज' से क्षीण होती गयी। सन १९२५ में देशबंधु के देहान्त से पार्टी का महत्वपूर्ण पुर्जा ही टूट गया। आगे पार्टी ने ही अपने सदस्योंपर प्रतिबंध लगा दिया, जिसका समर्थन म.गांधी ने किया। इसी समय मुहम्मदअली जिन्ना कॅांग्रेस छोडकर मुस्लिम लीग में सम्मिलित हो गये।

सन १९२४ में 'खिलाफत आन्दोलन' के बाद रुकी हुई, मुस्लिम लीग, की गतिविधियाँ फिर से प्रारंभ हुई। अँग्रेज सरकार राष्ट्रीय ऐक्य की संगठीत शक्ति को तोडने के लिए 'लीग' की पीठ ठोंक कर उसके माँगों का समर्थन करने लगी थी। २४ मई १९२४ ई.में लाहोर में जिन्ना की अध्यक्षता में 'लीग' की बैठक हुई। इस बैठक से सांप्रदायिकता का प्रश्न स्पष्ट होकर उभरने लगा। समय के साथ साथ 'मुस्लिम लीग' में इस प्रश्न को लेकर कट्टरता बढने लगी और अँग्रेजोंने उसे और बढावा दिया। हाँ, 'लीग' में कुछ ऐसे नेता भी थे, जो राष्ट्रीयता और प्रजातंत्र के समर्थक थे। जिनमें - मौलाना आजाद, मौलाना महमंद अली, हकिम खाँ, डॅा.अंसारी, के नाम उल्लेखनिय है। परंतु दुसरे दर्जे के नेता मुसलमान जनता के अधिक निकट थे। धीरे धीरे उन्होंने आग बढाया और सन १९४० ई.में स्पष्टत: पाकिस्तान की माँग की गई। "सन १९४० के लाहोर

अधिवेशन में ` लीग ` ने देश के बटवारे तथा मुस्लिम राज्य ` पाकिस्तान ` की माँग प्रस्तुत की । `[१] अन्ततः सन १९४७ में आजादी के साथ देश का विभाजन होकर ` पाकिस्तान ` का निर्माण हुआ ।

सन १९२०-३० तक ब्रिटिशों की कूट नीति का दमनचक्र खूब चला रहा । हिन्दू-मुस्लिमों में सांप्रदायिकता की आग बढती गयी । सन १९३० में एक भयंकर सांप्रदायिक आग भडक उठी, जिसमें गणेश शंकर विद्यार्थी जैसे साधक को प्राण न्यौछावर करने पडे ।

कौन्सिल प्रवेश के बाद सन १९२९ तक का समय भारतीय राजनीति में शीतलता का समय था । इस बीच ` सायमन कमिशन ` का बहिष्कार जोरदार रुपमें किया गया । उसमें एक भी भारतीय नहीं था । धीरे धीरे असंतोष तीव्र होता गया । गांधीजीने अहिंसा को अपनी नीति घोषित करते हुए सत्याग्रह की तैयारियाँ शुरु कर दी । और सन १९३० ई. में ` दाण्डी यात्रा ` आरंभ हुई । यह एक महान जन-आन्दोलन है । ६ अप्रैल १९३० को दांडी ` पहुँच कर नमक कानून तोडा गया । महिलाओंने पर्दा छोडकर इसमें सहभाग लिया । ब्रिटिश सरकारने आन्दोलन दबाने का भरसक कोशिश की, लाठियाँ चली, गोलियाँ चली, करिबन नब्बे हजार आन्दोलनकारी गिरफ्तार कर लिये गये । क्या बच्चे, क्या जवान, क्या वृध्द सब में एक आशा की कामना थी, सबके सब तन मन से जुट गये थे । अन्तमें सरकार को समझौता करना पडा । म.गांधी कॉग्रेस के प्रतिनिधि बनकर गोलमेज परिषद में भाग लेने लंदन गए । परंतु खाली हाथ लौट आए । वास्तव में परिषद महज एक दिखावा थी । गांधीजी के भारत लौटने से पहले ही प्रमुख नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया । ` न मालूम कहाँ से नये नेता निकल आये, जिन्होंने अपने ढंग से कार्यक्रम भी बना लिये और कानून भंग का कार्य जोरोंपर चलता रहा । `[२] इसी बीच हरिजनों

---

१ गुरुमुख निहालसिंह - आधुनिक राजनीतिक संविधान - पृ.सं.२९३

२ डॉ.राजेन्द्र अवस्थी - आत्मकथा - पृ.सं.३६५

को हिन्दुओं से अलग करने की कोशिश की गई। किन्तु गांधी जी ने इस सांप्रदायिक निर्णय के विरुध्द प्राणान्तिक उपोषण की घोषणा कर दी। `पुना पैक्ट` हुआ और व्रत तोड दिया। इसके बाद भी अंग्रेज सरकार की अडंगे की नीति चलती ही रही।

" कांग्रेस में भारतीय जनता की दशा सुधारने के ध्येय से आर्थिक एवं सामाजिक ढाँचे में क्रांतिकारी परिवर्तन एवं नई समाज व्यवस्था का प्रस्ताव पास हो गया।"[१] उसी वर्ष सन १९३५ में भारतीय शासन विधा बना। मात्र `विटों` का अधिकार गव्हर्नर को दिया गया। स्पष्टत: अंग्रेज सरकार की नीति थी, कि भारत की स्वाधीनता की माँग को किसी तरह टाला जाए। आगे चलकर `क्रिप्स मिशन` `कॅबिनेट मिशन` का गठन हुआ। पर यह सब महज एक दिखावा था। " कॉंग्रेस ने सन १९३५ के भारतीय विधान को अमान्य करते हुए सरकार को अपनी शक्ति का परिचय देने के लिए सन १९३७ के चुनाव में भारत के अधिकतर प्रांतों में बहुमत प्राप्त किया।"[२] फलत: सात प्रांतों में अपनी सरकारे बनी।

सन १९३९ व्दितीय महायुध्द का आरंभ हुआ। अंग्रेज सरकार ने भारतीयों की सम्मति के बिना भारत के द्वितीय महायुध्द में सम्मिलित होने की घोषणा कर दी। फलत: कॉंग्रेसी प्रांतीय सरकारों ने त्यागपत्र दे दिया। एक साल तक कॉंग्रेस शांत रही, परंतु पूर्ण तटस्थ बना रहना संभव न था। गांधीजीने भारत को युध्द में घसीटने का विरोध प्रकट कर, व्यक्तिगत सत्याग्रह आरंभ दिया। युध्द विरोधी भाषणों की बाढ सी आ गयी। देश के नेता विभिन्न भागों में गिरफ्तार कर लिये गये। व्यक्तिगत सत्याग्रहियों से जेलें भर गई। विनोबा भावे, पंडित नेहरु, सरदार पटेल तथा सुभाषचंद्र बोस आदि प्रसिध्द नेता गिरफ्तार हुये। नेताजी बोस जेल से २१ जनवरी १९४१ को अदृश्य

---

१ डॉ. पट्टाभि सीतारामय्या - कॉंग्रेस का इतिहास - पृ.सं.२९१-२९२
२ सी.बी.चंद्रशेखरन - पालिटिकल पार्टीज - पृ.सं.६०

हो गये । युध्द में भारतीयों के सक्रिय योगदान के लिए १९४२ में क्रिप्स महोदय भारतीय संघ निर्माण की योजना लेकर आए, जिसके प्रति तीव्र रोष प्रकट किया गया ।

` चले-जाव ` आन्दोलन --

ब्रिटिशों की बदलती नीति और भारतीय जनता के व्यापक असंतोष को देखकर ८ अगस्त १९४२ को ` भारत छोडो ` का व्यापक आन्दोलन आरंभ हुआ ! जिससे सारे देश में खलबली मच गई । असंख्य गिरफ्तारियाँ हुईं । प्राय: काँग्रेस के सभी प्रमुख नेताओं को जेल में बन्द करवा दिया । और देशभर क्रूर दमन शुरु हुआ । जगह जगह आन्दोलनों का गुबार आया । लोगों ने हिंसा से सरकार का सामना किया । चारों तरफ रेल की पटरियाँ-उखाड दिये जाने लगे, बिजली और फोन के तार काटे जाने लगे और सरकार की संपत्ति की लूट होने लगी । हजारों आदमी मारे गए और घायल भी हुए । आचार्य नरेन्द्रदेव ने इस आन्दोलन का मूल्यांकन इन शब्दों में किया है --" इस आन्दोलन ने दिखलाया कि जनता बहुत आगे बढ गई है और कार्यकर्तागण पिछे रह गये है । "[१] सन १९४५ में ब्रिटन में उदारमतवादी दल की सरकार बनी, जिसे भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन के प्रति काफी सहानुभूति थी । परिणामत: १९४६ में भारत में अन्तरिम सरकार बनी । इसी समय मुस्लिम-लीग की घृणात्मक और अनुदार नीति के कारण कलकत्ता, नोआखाली, बिहार तथा पंजाब में भीषण सांप्रदायिक दंगे उभर आए । अन्तत: मुस्लिम लीग अपने घृणात्मक विचारोंपर अटल रही । और १५ अगस्त १९४७ को देश का विभाजन होकर, पाकिस्तान का निर्माण हुआ - भारत स्वतंत्र हुआ ।

---

१ आ. नरेन्द्रदेव - राष्ट्रीयता और समाजवाद - पृ.सं. ९०

स्वंतत्रता - आन्दोलन में क्रांतिकारियों का योगदान --

भारत को आजादी दिलाने का श्रेय निःसंदेह ही काँग्रेस दल तथा उसके नेताओं को देना चाहिए। मात्र इस लड़ाई में क्रांतिकारियों का योगदान भी ठुकराया नहीं जाता। इन क्रांतिकारियों का विश्वास शस्त्रपर था। इन्होंने शस्त्र के बलपर आजादी को हासिल करने की कोशिश की थी। भले ही, वे इसमें सफल न हो सके, मात्र उनका योगदान अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। यहाँ इन विशेष उल्लेखनिय क्रांतिकारों और क्रांतिकारी घटनाओंका संक्षिप्त विवरण देना अनुचित नहीं होगा।

पुना के चाफेकर बंधुओंने सन १८९७ में अंग्रेज अधिकारी रैंड तथा उसके साथी की गोली मारकर हत्या कर दी थी। सावरकर बन्धुओंने भी क्रांतिकारी भावना को जाग्रत किया। वीर सावरकर का इस दृष्टि से बहुत ही महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। बंगाल में खुदीराम बोस, वारीन्द्रकुमार घोष, तथा उनके साथियों ने भी इस कार्य में सक्रिय योगदान दिया था। 'चटगाँव शस्त्रागार काण्ड' क्रांतिकारियों के भयानक जीवन का प्रमाण माना जा सकता है। भगतसिंह, राजगुरु तथा चंद्रशेखर 'आजाद' की कथा तो सारा देश जानता है। भगतसिंह की तरह न जाने कितने ही क्रांतिकारी हँसते-हँसते फाँसी के तख्तेपर झूले और न जाने कितनों को काला-पानी की सजा हुई। इन क्रांतिकारियों ने भारतीय वीरता की जीती-जागती तस्वीर दुनिया के सामने रखी। सशस्त्र क्रांति के इतिहास में नेताजी सुभाषचंद्र बोस तथा उनके 'आझाद हिन्द सेना' का नाम सुवर्ण अक्षरों में लिखा जायेगा। इन शहिदों के आत्मबलिदान ने युवकों में राष्ट्रप्रेम और शहादत की भावना को बढ़ावा दिया। जिससे प्रेरित होकर युवकों ने स्वतंत्रता आन्दोलन के अग्नि-कुण्ड में अपने आप को झोंक दिया।

इस प्रकार अनेक वीर पुरुषों की कुर्बानियों के फलस्वरुप देश स्वतंत्र तो हुआ, परंतु कुछ ही दिनों में सत्य, अहिंसा के पुजारी म.गांधीजी की हत्या हुई। देश-विभाजन से शरणागतों की पुर्नवसन की समस्या खड़ी हुई। रक्तरंजित प्रवाह बढ़ गया था। देश में जगह जगह सांप्रदायिकता की आग भड़क

उठी । आज भी बीच-बीच में यह आग भड़क उठती दिखाई पड़ती है । देशी रियासतों की समस्या तथा काश्मीर समस्या उपर आई । सरदार पटेलजी ने देशी रियासतों की समस्या को समर्थतासे सुलझाया, परंतु कश्मीर समस्या का प्रश्न विकट बना । विभाजन के बाद आशा थी कि भारत व पाकिस्तान में दृढ सम्बन्ध स्थापित होंगे । परंतु कुछ धर्मांध पागलों ने घोरतम्अमानवीय अत्याचार किये और सांप्रदायिकता को बढावा देते रहे । आज भी यह सम्बन्ध दृढ नहीं हो पाया ।

२६ जनवरी १९५० को भारत ने गणतंत्र दिवस मनाया । तत्पश्चात संविधानानुसार चुनाव होते रहें । बीच का अपवाद छोडकर कॉंग्रेस दल ही सत्ताधारी रहा । फिर भी उन्नति संतोषजनक नहीं मानी जा सकती । स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारतीय समाज ने ' राम-राज्य ' और स्व-राज्य की कल्पना की थी । सुखी जीवन का सुनहरा सपना देखा था । यह कटु सत्य है कि स्वंतत्रता के बाद का समय भारतीय समाज के लिए मोह-भंग का काल रहा है । हमारी मोह निद्रा टूट गई हैं । रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने एक बार कहा था, कि " भाग्य-चक्र एक दिन अंग्रेजों को भारत छोडने के लिए बाध्य करेगा, किन्तु जब वे जाएँगे, तो देश को वीरान बनाकर जाएँगे । " कविवर की वाणी सत्य सिध्द हुई । गांधीजी के आदर्शों को सामने रखकर हमारे नेताओं ने जनता को आश्वासन दिया, कि देश शीघ्र ही उन्नति कर समृध्द बनेगा । चौमुखी विकास के लिए तथा आत्मनिर्भर बनने के हेतु पंचवर्षीय योजनाओं का आयोजन किया गया । हरित-क्रांति के साथ साथ औद्योगिकरण का भी आरंभ हुआ । इन विकासवादी योजनाओं द्वारा जन-साधारण का जीवनस्तर ऊँचा करना, सभी के लिए लाभपूर्ण नियोजन का प्रबंध करना, खाद्य एवं अन्य आवश्यक साम्ग्रीयों का उत्पादन बढाना - प्रमुख लक्ष्य था । उन्नति के लक्षण भी दिखलाई पडी । भारत का नाम आन्त -राष्ट्रीय क्षेत्र में भी ऊँचा उठने लगा है । आधुनिक विज्ञान एवं टेक्नोलोजी को

---

१ सं.हरिवंशराय बच्चन, नगेन्द्र, भारतभूषण - समसामायिक हिन्दी साहित्य - (लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय के परिवेश) से उद्धृत - पृ.सं.२०

सहायुक्ता से चौमुखी उन्नति और समृध्दि बढने लगी और उसके साथ ही असंतोष भी। क्योंकि नेताओं की मतलबपरस्ती सामने आने लगी, व्यापक हित की अपेक्षा पार्टी-हित की बात सोचने से, स्वार्थी, आत्महित रत लोग नेता बनने लगे। जिससे नेतागिरी सस्ती हो गयी। कुर्सी की राजनीति चलने लगी। फलस्वरुप भाईभतिजेवाद, बेईमानी, भ्रष्टाचार, दल-बदली को बढावा मिला और जन-सामान्यों में निराशा बढने लगी।

देश की उन्नति का लाभ जन-साधारण को मिलेगा यह आशा की गयी थी। परंतु इसके विपरित पूँजी कुछ ही लोगों के हाथ में चली गयी। इनकी ही तरक्की दिन-ब-दिन बढने लगी। पूँजीवाद का जन्म हुआ और फैलाव भी। देश पूँजीवाद के गर्त में डूबता गया। आन्तरिक असंगतियाँ और अव्यवस्था के कारण देश की आर्थिक दशा बिगड गयी। आवश्यक वस्तुओं के दाम बढते गये। रोटी, कपडा और मकान की समस्या कठिन बन गई। व्यक्ति हित राष्ट्र हित से भी ऊपर उठ गया। व्यक्ति ने यह अनुभव किया कि पैसा ही सबकुछ है, और उसे प्राप्त करने में, वह किसी भी मार्ग का अवलम्ब कर सकता है। फलस्वरुप दिन-ब-दिन विसंगतियाँ बढने लगी। पहले से ही बेरोजगारी तथा दिशाहीनता से युवाशक्ति कुंठित हो गई थी। राजनीतिज्ञ (नेता) अपने स्वार्थ के लिए उनका प्रयोग करने लगे। आज बढती हुई महगाई, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार रिश्वतखोरी, दादागिरी, घूसखोरी, कालाबाजार, मुनाफखोरी आदि प्रवृत्त्तियाँ अपनी सीमा को पार कर चुकी हैं। जिससे आम-आदमी का जीना हराम हो गया है। बीच में कुछ समय के लिए 'चीनी आक्रमण' और काश्मीर समस्या ने भारत की एकता को फिर से बाँध दिया था। परंतु आज राष्ट्रीय एकात्मकता को लेकर जन-जागृति की आवश्यकता बढ गई है। देश की आन्तरिक शक्तियाँ ही देश का शोषण करने में तुली हुई है। शोषण की पुरानी पध्दतियाँ नये रुपमें, नये नाम से कार्य में रत हैं। नेतागण, पुलिस, सरकारी अफसर सब अपने स्वार्थ में ही निमग्न हैं। अत: स्वतंत्र भारत के सामने अपनी रक्षा की समस्या सर्व प्रमुख

हैं। अपहरण का भय केवल बाह्य शक्तियों से ही नहीं, बल्कि आन्तरिक शक्तियोंसे ही अधिक हैं। इसे समाप्त कर प्रत्येक नागरिक को न्यायोचित, स्वतंत्र और संपन्न जीवन बिताने का सुअवसर देते हुए, राष्ट्र को सुदृढ और उन्नतशील बनाना है।

राजनीतिक परिस्थिति और वर्माजी का उपन्यास साहित्य --

उपन्यास लेखक अपने समय की राजनीतिक गतिविधियों से प्रभावित हुए बिना नहीं रह पाते। भगवतीबाबू ऐसे ही उपन्यासकार थे। अत: उन्होंने सम - सामायिक राजनीतिक विभिन्न गतिविधियोंसे साक्षात्कार कर अपने उपन्यासों में उनका स्वाभाविक चित्रण किया है। ` टेढे मेढे रास्ते ` तो वर्माजी का विशुध्द राजनीतिक उपन्यास हैं। इसके अतिरिक्त राजनीतिक पृष्ठभूमि को लेकर लिखे गये उपन्यासों में ` भूले बिसरे चित्र `, ` सीधी सच्ची बातें ` तथा ` प्रश्न और मरीचिका ` विशिष्ट कृतियाँ हैं।

` टेढे मेढे रास्ते ` भगवतीबाबू का राजनीतिक पृष्ठभूमिपर लिखा गया श्रेष्ठ उपन्यास है। इसमें सन १९३० ई.के सत्याग्रह आन्दोलन की पृष्ठभूमि को प्रत्यक्ष कर दिया है। साथ ही साथ विभिन्न दलों के दृष्टिकोणों को तथा कॅांग्रेस की शक्ति एवं सबलता और सत्याग्रह आन्दोलन के स्वरुप को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। एक ही परिवार के तीन पुत्रों दयानाथ, उमानाथ और प्रभानाथ व्दारा क्रमश: गांधीवाद, समाजवाद तथा आतंकवाद के विचारधाराओं का चित्रण किया है। इनके अतिरिक्त अन्य अनेक पात्र इन विचारधाराओंका प्रतिनिधित्व करते हैं। सामंतशाही के चित्र भी यत्र-तत्र बिखर पडे है। निसंदेह ही ` टेढे मेढे रास्ते ` में वर्माजीने समकालीन राजनीतिक परिस्थितियों का यथार्थ चित्रण किया है।

` भूले बिसरे चित्र ` स्वातंत्र्योत्तर काल में लिखा गया बृहतकाय उपन्यास हैं। भगवतीबाबू ने सन १८८५ से १९३० तक के भारतीय समाज-जीवन को

तीन पीढियों के माध्यम से साकार कर दिया है। इस उपन्यास में राजनीतिक स्वर स्पष्ट है। प्रथम दो खण्डों में सामंतवाद और नौकरशाही का व्यापक चित्रण है, तो तिसरे खण्ड में गांधीवाद का यथार्थ चित्रण मिलता है। ' भूले बिसरे चित्र ' में वर्माजी ने उस काल को उठाया है, जिसमें हमारी राष्ट्रीय चेतना जागृत हुई और हमारा राष्ट्रीय आन्दोलन पनपा। इस उपन्यास में ' असहयोग आन्दोलन ' चौरी-चौरा काण्ड, सांप्रदायिक दंगे, ' सायमन कमिशन बहिष्कार ', लाहौर कौंग्रेस ' नमक सत्याग्रह ' तथा अछूतोध्दार आदि राजनीतिक घटनाओंका चित्रण किया है। वर्माजीने इस उपन्यास में तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियाँ तथा हलचलों का यथार्थ चित्रण किया है।

' सामर्थ्य और सीमा ' में स्वतंत्र भारत की राजनीति में फैली अव्यवस्था, अराजकता, भ्रष्टाचार का यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया है। ' सीधी सच्ची बातें ', में त्रिपुरी कांग्रेस से गांधी हत्या तक के विभिन्न राजनीतिक गतिविधियोंका चित्रण किया है। सन १९३८ से १९४८ तक के एक दशक की भारतीय समकालीन इतिहास के - नेताजीबोस व गांधी की विचारधाराओंका टकराव, नेताजीका कौंग्रेस से निस्कासन, द्वितीय महायुध्द का आरंभ, नेताजीका अदृश्य होकर विदेश में प्रकट होना, ' चलेजाव आन्दोलन ', ' क्रिप्स प्रस्ताव, सांप्रदायिक संघर्ष, भारत - विभाजन से निर्मित दर्दनाक रक्त-रंजित स्थिति इ. राजनीतिक घटना क्रमोंका यथार्थ चित्रण किया है। ' सबहि नचावत राम गुसाईं ' में वर्माजीने वर्तमान राजनीतिक तथा सामाजिक यथार्थ को बहुत ही बेबाकी से बेनकाब किया है। सेठ राधेश्याम, मंत्री जबरसिंह, पुलिस अधिकारी रामलोचन आदि प्रमुख पात्रोंव्दारा भ्रष्ट राजनीति के यथार्थ चित्र खिंचे है। ' प्रश्न और मरीचिका ' में सन १९४७ से १९६३ तक के भारतीय राजनीतिक उठ-पटाक का चित्रण किया है। वर्माजीने इसमें सत्ता संघर्ष, विरोधी पार्टी के नेताओं की कुण्ठा, बढते हुए भारत के राजनीतिक सम्बन्ध, प्रजातंत्र प्रणाली में चुनाव नीति आदि का यथार्थ चित्रण किया है। इस प्रकार ' प्रश्न और मरीचिका ' में स्वतंत्र भारत

की विसंगतियोंसे भरी राजनीति का सजीव चित्रण किया है।

इस प्रकार हम देखते है कि भगवती बाबूने उन्नीसवीं शताब्दी के अंतीम चरण से लेकर आजतक के राजनीतिक पृष्ठभूमि को अपने उपन्यासों में चित्रित किया है। और स्वातंत्र्यपूर्व के जन-आन्दोलन तथा स्वातंत्र्योत्तर देश की राजनीतिक गतिविधियों के यथार्थ चित्र प्रस्तुत किये हैं।

सामाजिक परिस्थिति --

बीसवीं शताब्दी का भारत अंग्रेजों की गुलामी में बेहत्तर जकडा हुआ था। भयानक रुढियों, अन्ध विश्वासों, परम्पराओं एवं आस्थाओं से समाज बुरी तरह ग्रस्त था। मात्र बीसवीं शती के प्रथम दशक का भारत - नवीन सामाजिक धार्मिक - सांस्कृतिक एवं राजनीतिक चेतना से आक्रान्त था। धर्म के क्षेत्र में आर्य समाज का प्रभाव तेजी से बढ रहा था। स्वामी दयानंद सरस्वती तथा स्वामी विवेकानंद का प्रभाव ही अधिक था। विवेकानंद ने अंतराष्ट्रीय स्तर पर ख्याति प्राप्त की थी। सांस्कृतिक जीवन में पुराने रीति-रिवाजों के साथ बढती हुई अंग्रेजी शिक्षा के संपर्क से मध्यमवर्गीय परिवारोंका रुप बदल रहा था। विश्व स्तरपर पूंजीवाद का विस्तार हो रहा था। इसका परिणाम भारत के ग्रामों की स्थिति में परिवर्तन के रुप में हो रहा था। जमींदारी प्रथा, जारशाही, का उच्चाटन हो रहा था। जमींदार, ताल्लुकेदार अपनी विलासी प्रवृत्ति तथा अकर्मण्यता के कारण पतोनोन्मुख हो रहे थे। प्लेग जैसी महामारी में लाखों-हजारों घर उजाड जाते थे। प्रथम महायुध्द की भीषणता के कारण किसानों की स्थिति दयनीय बन चुकी थी। रुसी मजदूरों के क्रांतिकारी संघर्ष ने विश्व में अमूल परिवर्तन की लहर सी दौड उठी थी। इस युग के समाज ने लॉर्ड लिटन की दमननीति और लॉर्ड रिपन के शासन का सुख भी देखा। नवयुवकों का पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति से संपर्क बढा और उत्तरार्ध के धार्मिक आन्दोलनों के कारण राष्ट्रीयता की भावना भी बढी। "राजनीति की तरह

ही सामाजिक परिस्थितियाँ भी इस स्तर तक पहुँची थी, जिन्होंने साहित्य लेखकों के सम्मुख अपनी सारी समस्याएँ खोलकर रख दी थी। राजनीति से कहीं अधिक प्रेरक शक्ति के रूपमें यह परिस्थितियाँ है। सत्यता यह है कि राजनीतिक आन्दोलन को जो रूप मिला उसमें सामाजिक क्रान्ति का बहुत बड़ा हाथ है।"[१] प्राचीन रीति-रिवाज, परम्पराएँ, प्रथाएँ तथा सामाजिक मान्यताएँ समाप्त होकर, इनके स्थानपर नई मान्यताएँ स्थापित हुई, जिसमें नारी घर की चहारदीवारी को लाँघकर पुरुष के साथ हरक्षेत्र में कार्य करने लगी।

समाज में क्रांति लानेवाले पुरुष थे - राजाराम मोहन रॉय, स्वामी दयानंद, गोविंद रानाडे आदि। तत्कालीन समाज में बाल-विवाह, विधवा नारी की हीनावस्था, अनमेल विवाह आदि सामाजिक कुरीतियाँ प्रचलित थी। जो समाज के लिए अहितकारी थी। दहेज प्रथा के कारण माता-पिता अपने बच्चों के विवाह छोटे उम्र में ही कर देते थे। इससे निर्मित बाल विधाओं की दशा तो अत्यंत शोचनीय थी। राजाराम मोहन रॉय ने सती प्रथा, बाल विवाह जैसे कुप्रथाओंका कड़ा विरोध किया और उनके समूल उन्मूलन का प्रयास भी। इधर महाराष्ट्र में रानडेजी के नेतृत्व में अनेक सामाजिक संस्थाओंकी स्थापना हुई। इन्होंने भारतीय संस्कृति का और समाज सुधार की भावना को जागृत किया। इन्होंने प्रार्थना समाज व्दारा जातिप्रथा का विरोध, विधवा विवाह का समर्थन, स्त्री शिक्षा का प्रचार तथा बाल विवाह विरोध आदि महान कार्य किया।

स्वामी दयानंद सरस्वती के मीठे उपदेशोंसे सति प्रथा, विधवा विवाह, बाल विवाह, और भी विवाह सम्बन्धी कुरीतियोंकी जड़ें हिल गई। पारस्पारिक सौहार्द की भावना बढी। संकुचित सामाजिकता की अवहेलना होकर सामाजिक

---

१ डॉ. विमल भास्कर - हिन्दी में समस्या साहित्य - पृ.सं.२१

समानता की ओर समाज अग्रसर हुआ । स्वामीजी के और दो महान कार्यों के लिए समाज हमेशा उनका ऋणी रहेगा, ये महान कार्य है -- "राष्ट्रीयता और राष्ट्रभाषा हिन्दी का प्रचार ।" इसके साथ ही प्राचीन संस्कृति का पुनरुत्थान, वेदों के प्रति श्रध्दाजागरण, शिक्षा संस्थाओं के निर्माण द्वारा शिक्षा प्रचार, नारी जाति के प्रति समानता की भावना, पुरातन रुढियों का त्याग तथा अस्पृश्यता निवारण आदि महान कार्य भी स्वामीजी ने किया ।

आज का समाज संगठन मध्ययुगीन समाज व्यवस्था का ही विशृंखलित रुप है । अत: आधुनिक समाज व्यवस्था उसके माध्यम से ही समझना उचित होगा । हम यहाँ इन्हीं दृष्टिकोण से समाज व्यवस्था का परिचय प्राप्त करेंगे ।

वर्ण - व्यवस्था --

मध्ययुगीन समाज व्यवस्था में वर्ण व्यवस्था, समाज की प्रमुख संस्था थी । आज के आधुनिक युग में वर्ण व्यवस्था और उससे जुडी हुई बातें मूल्यहीन साबित हुई । युग की आर्थिक और सामाजिक शक्तियों ने इन दोषों के आधारभूत स्तंभोंपर ही आक्रमण किया, जिससे वह टूट चली । इसमें राजाराम मोहन रॉय, दयानंद सरस्वती, रामकृष्ण परमहंस, म० गांधी आदि प्रमुख समाज सुधारकों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है । सुधारक संस्थाओं में ब्राह्मो-समाज, आर्य समाज, प्रार्थना समाज, थिओसॉफिकल सोसायटी, रामकृष्ण मिशन आदि के नाम उल्लेखनीय हैं । भारतीय संविधान में निम्न पिछडे वर्ग को विशेष सुविधाएँ दी गई और आधुनिक शिक्षा, पश्चिमी सभ्यता के संपर्क बढने से तथा उसके प्रभाव से नगरों का विकास हो रहा है । नगरों के विकास के साथ वर्ण व्यवस्था का ह्रास हो रहा है । मात्र गांवों में कुछ हद्तक वह आज भी जिंदा है ।

संयुक्त परिवार प्रथा --

संयुक्त परिवार प्रथा भी भारतीय समाज व्यवस्था की महत्त्वपूर्ण संस्था थी। इसके अंतर्गत एक ही परिवार के सब व्यक्ति पीढियोंतक एक ही कुटुंब में रहकर - खान - पान, सामाजिक तथा पारिवारिक कृत्य सब संयुक्त रुपमें व्यतीत करता था। पैतृक संपत्ति का विभाजन नहीं होता था और व्यक्ति की आय पूरे परिवार की होती थी। परंतु जहाँ संयुक्त परिवार में एक ओर असंख्य लाभ थे, वहाँ दुसरी ओर कुछ ऐसी बातें भी थी, जो व्यक्ति विकास को कुंठित कर देती थी। मात्र आधुनिक युग में नवीन चेतना के आलोक में और पाश्चात्य सभ्यता के संपर्क से व्यक्ति स्वातंत्र्य की भावना उभर आई। साथ ही आर्थिक और पारस्पारिक व्यवहार के सम्बन्ध में नयी नयी समस्याएँ उठ खडी हुई। फलस्वरुप संयुक्त परिवार तेजीसे टूटने लगे। मात्र इसके विघटन से जहाँ व्यक्ति-विकास का मार्ग खुला हुआ, वहाँ अनेक समस्याएँ भी खडी हो गयी। उनमें प्रमुख थी, आश्रीत नारियों के रक्षण और जीवन निर्वाह की। मात्र सुधारवादी दृष्टिकोण के कारण पर्दा-प्रथा का निषेध, स्त्री शिक्षा का समर्थन और विधवा-विवाह को मान्यता देकर नारी स्वातंत्र्य का प्रश्न उठ खडा हुआ। आज नगरों में संयुक्त परिवार प्रथा नहीं के बराबर है। मात्र गाँवों में कम-बहुत स्थिति में वह आज भी जिंदा है। विशेष अवसरोंपर परिवार के सभी सदस्य इकठ्ठा होकर कार्य में सम्मिलित होते हैं।

समाज के विभिन्न वर्ग --

मध्ययुगीन समाज व्यवस्था में सामंत वर्ग, जमींदार, देशी रियासतों के राजा महाराजा तथा सरकारी अफसरों का बोलबाला था। आज यह व्यवस्था टूट रही है। उनके स्थान पर नये वर्ग जन्म ले रहे हैं। किसी विशिष्ट जाति - वर्ग का प्रभाव समाजपर आज तो नहीं के बराबर है। समाज की संपत्ति भी आज किसी वर्ग विशेष के हाथ में नहीं है। भारतीय समाज व्यवस्था में सामान्यतः

SHIVAJI UNIVERSITY LIBRARY KOLHAPUR

सामन्तवर्ग, पूँजीपति वर्ग, मध्यवर्ग, कृषक वर्ग, श्रमिक वर्ग दिखाई देते हैं। आज सामंत वर्ग समाज से पूर्णतः तिरोहित हो गया है। फिर भी समाज व्यवस्था का वह महत्वपूर्ण अंग रह चुका है। इन वर्गों की स्थितिपर भी संक्षिप्त विवेचन करना आवश्यक हो जाता है।

सामन्त वर्ग --

सामन्त वर्ग के अंतर्गत देशी-रियासतों के राजा-महाराजा, जमींदार आते हैं। जिन्होंने अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए जनता का शोषण ही किया । यह समाज का सबसे शक्तिशाली वर्ग था। इनके शोषण से सर्वाधिक पीडित वर्ग कृषक एवं नारी वर्ग रहा है। इन्होंने नारी को उपभोग्य वस्तु मानकर उनका भोग ही किया। जिससे पर्दा-प्रथा, बहु-विवाह जैसी समस्याएँ नीर्मित हुई। मात्र आधुनिक समाज व्यवस्था में व्यापक परिवर्तन हुआ। रियासतों का उन्मूलन हुआ। जमींदारी खत्म हुई और कृषक वर्ग स्वतंत्र हुआ, नारी मुक्त हुई।

पूँजीपति - वर्ग --

द्वितीय महायुध्दोपरान्त औद्योगिक क्रांतिसे आधुनिक समाज व्यवस्था में पूँजीपति वर्ग का निर्माण हुआ। यह आर्थिक दृष्टिसे संपन्न तथा सर्वाधिक शक्तिशाली वर्ग रहा है। वह जहाँ एक ओर देश की शासन व्यवस्था में सहयोग देता है, वहाँ दुसरी ओर देश के आर्थिक साधनोंपर निर्बन्ध लगाकर सामाजिक व्यवस्थापर अधिपत्य रखने का प्रयास करता है। उनकी राष्ट्रीयता केवल औद्योगिक क्षेत्र तक ही सीमित है। देश के हित की अपेक्षा अपने आर्थिक हितों की रक्षा के लिए ही, वह उद्योगोंके विकास में रुचि रखता हैं।

मध्यवर्ग --

आधुनिक समाज व्यवस्था में शिक्षा का प्रसार, अंग्रेजों की राजकीय

प्रणाली, देश की आर्थिक व्यवस्था तथा पूँजीवादी व्यवस्था को सुदृढ बनाये रखने के फलस्वरुप समाज में मध्यवर्ग का उदय हुआ । यह बुध्दिजीवी वर्ग है, जो परिश्रम नहीं करता और उत्पादन शक्ति से भी दूर रहता है । वह पूँजीपति और श्रमिक वर्ग के बीच की स्थिति का प्रतिनिधित्व करता है, इसलिए मध्यवर्ग कहलाता है । यह वर्ग उत्तरोत्तर बढता ही जा रहा है । आज मध्यवर्ग नये पुराने संघर्ष के बीच विचारशील अधिक और क्रियाशील कम बन गया है । उसमें हमेशा अभिजात वर्ग से मिलने की चाह बनी रहती है । वह अपने को सर्वहारा वर्ग से पूर्णत: पृथक मानता है । मध्यवर्ग का विभाजन उच्चमध्य वर्ग, मध्यवर्ग तथा निम्न-मध्य वर्ग के रुपमें किया जाता है । मध्यवर्ग में सबसे दयनीय तथा संघर्षपूर्ण स्थिति नारी की है । वह घर बाहर की संघर्ष में जकडी हुई है । " समय के साथ यथार्थ की परिभाषा बदलती है, साथ जीवन मूल्य और जीवन सत्य बदलता है, किन्तु सब कुछ बदलने के बाद भी नारी के प्रति धर्म का, समाज तथा पुरुष का दृष्टिकोण नहीं बदला । वह घर से बाहर निकलती है । बाहर का संघर्ष उसे तोडता है, वह टूटकर फिर घर की ओर लौटती है । और इस तरह टूट-टूटकर जुडने में वह कहीं की नहीं रहती ।" [१] इसतरह परिस्थितिसे विवश होकर नारी घर की सीमाओं से बाहर निकलकर अपने जीवन निर्वाह में समर्थ तथा आत्मनिर्भर बननेपर भी नैतिक, सामाजिक, मान्यताओं एवं पुराने संस्कारों से बंध है ।

कृषक और श्रमिक वर्ग --

भारत आज भी खेती प्रधान देश है । भारत के सबसे अधिक लोग गांवों में ही रहते हैं । उनके जीवन निर्वाह का प्रबलतम साधन खेती तथा मजदूरी है । भूमि ही किसान की माँ है । जमींदारी प्रथा से पूर्व उसकी स्थिति अच्छी थी । किन्तु अंग्रेजी शासन काल में उसकी अवस्था दयनीय बन गयी । उत्पादन पर उसका नाम-मात्र अधिकार रहा । महाजनों के ऋण तथा भारी लगान से दबा हुआ किसान कर्ज

---

१ डॉ.सुभद्रा - हिन्दी उपन्यास - परम्परा और प्रयोग - पृ.सं.५९

से कभी मुक्त नहीं हो पाता । साथ ही साथ धर्म, बिरादारी तथा समाज भय में भी हमेशा दबा रहता । हर प्रकार के संकट तथा अन्याय अत्याचार को ईश्वर इच्छा मानकर चलता । अत: अन्तत: 'गोदान' की होरी की तरह किसान से मजदूर बनने की नौबत आती थी ।

म.गांधी ने उनकी इस दशा में सुधार लाने की कोशिश की । स्वतंत्रता के बाद जमींदारी उन्मूलन से उनकी स्थिति में क्रान्तिकारी परिवर्तन आया । पंच वार्षिक योजनाओं के अंतर्गत कृषि तथा किसानों को विशेष सुविधायें देकर सरकार उत्पादन बढ़ाने में भी सहयोग दिया । आज का किसान अपने अधिकार को लेकर जागृत है और संगठित भी हो रहा है ।

अंग्रेजी सरकार की जमींदारी प्रथा और आर्थिक व्यवस्था के परिणाम स्वरुप श्रमिक वर्ग का निर्माण हुआ । साथ ही औद्योगिक विकास के कारण लोग आकर्षित होने लगे और बढ़ती हुई महंगाई से निर्माण आजीविका की समस्या हल करने के लिए मजदूर बनने लगे । पूँजीपतियों की दासता और शोषण की नीति के फलस्वरुप मजदूरों की अवस्था दयनीय बनने लगी । इससे वे संगठित होने लगे । मजदूर युनियन बनने लगे और युनियन व्दारा मजदूर कल्याण का मार्ग प्रशस्त हुआ । आज संविधान के अंतर्गत इन्हें अनेक सुविधाएँ प्रदान की गई हैं । यह समाज का सबसे संगठित वर्ग है ।

इन वर्गों के अतिरिक्त आज सरकारी अफसर, नेता-गण और अन्य सत्ताधारी समाज में अपना अलग ही अस्तित्व स्थापित कर चुके हैं ।

इसप्रकार सामाजिक परिस्थितियों से यह स्पष्ट होता है कि व्यक्ति का सामाजिक जीवन परिवर्तित होता जा रहा है । कुछ वर्ष पूर्व की सामाजिक मान्यताएँ, रीति-रिवाज, आचार विचार, विश्वास, उँच-नीचता की कल्पना आदि में भी परिवर्तन आया है । समाज की मान्यताएँ, मर्यादाएँ टूट रही हैं । मूल्य परिवर्तित विश्रृंखलित हो रहे हैं । परिवर्तन की यह स्थिति समाज व्यवस्था के साथ ही अर्थव्यवस्था, व्यक्ति की स्थिति, परिवार, धार्मिक भावना, नैतिक मानदण्ड तथा शिक्षा व्यवस्था आदि सभी को प्रभावित कर रही है ।

सामाजिक परिस्थिति और वर्माजी के उपन्यास साहित्य --

भगवतीबाबू सामाजिक उपन्यासकार हैं। उनके उपन्यासों में सम-सामायिक सामाजिक परिस्थितियों के सुंदर ढंग से किये गये चित्रण में युग की आत्मा का स्वर मुखरित हो उठा है। उन्होंने अपने उपन्यासों में सामाजिक परिस्थितियों के यथार्थवादी अभिव्यंजना को ही प्रमुखता दी है। उनके उपन्यासों में भारतीय समाज का चित्रण यत्र-तत्र मिलता है। व्यक्ति को केन्द्र मानकर किये गये इस चित्रण में वर्माजी का प्रगतिशील दृष्टिकोण का परिचय प्राप्त होता है। उनके सभी उपन्यासों में सामाजिक यथार्थ का बहुत ही सुंदर चित्रण मिलता है।

'चित्रलेखा' वर्माजी का सर्वप्रथम महत्वपूर्ण उपन्यास है। इसमें पाप-पुण्य की सामाजिक समस्या का ही चित्रण प्रमुख है। साथ ही तत्कालीन समाज में नारी की स्थिति और वैवाहिक विधा-विधानों का संकेत भी मिलता है। 'तीन वर्ष' में 'स्त्री', हिन्दु धर्म में तलाक, स्त्री पुरुष सम्बन्ध और सामाजिक विकृतियों का विस्तार से चित्रण किया है। 'टेढे मेढे रास्ते' में संयुक्त परिवार प्रथा की विघटित रूप को चित्रित किया है। इसके साथ ही सामती व्यवस्था तथा उनके शोषक, उत्पपीडक एवं अत्याचारी रूप को भी दर्शाया है। 'आखरी दाँव' में मध्यवर्गीय विचित्र मानसिक अवस्था का चित्रण है। आर्थिक मूल्यों के इस युग में व्यक्ति और समाज दोनों को धन के पिशाच ने किस तरह विकृत कर दिया इसका सजीव अंकन है।

'भूले बिसरे चित्र' में मध्यमवर्ग की एक ही परिवार की चार पीढियों की कहानीद्वारा विगत पचास वर्षों के बदलते हुए भारतीय सामाजिक मूल्यों को दर्शाया है। इसमें विशेषत: पर पुरुष प्रेम, पारिवारिक संघर्ष, सामाजिक कुरीतियाँ, राष्ट्रीय आन्दोलन तथा बेकारी की समस्या आदि का चित्रण अत्यंत सफल बन पडा है। 'वह फिर नहीं आई' और 'रेखा' उपन्यासों में

वर्माजी ने आधुनिक प्रवृत्तियों का चित्रण किया है। ` अपने खिलौने ` में उच्च मध्य वर्ग का समाज जीवन चित्रित है। ` थके पाँव ` में निम्न मध्यवर्ग के आर्थिक संघर्ष को चित्रित किया है।

` सामर्थ्य और सीमा `, ` सीधी सच्ची बातें `, ` सबहिं नचावत राम गुसाईं `, तथा ` प्रश्न और मरीचिका ` में स्वातंत्र्योत्तर भारत के समाज जीवन का चित्रण मिलता है। ` सामर्थ्य और सीमा ` में सरकार की विकास योजनाओं द्वारा स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद की भारतीय औद्योगिक विकास योजनाओं से समाज में बढ़ती हुई पूँजीवादी प्रभाव को स्पष्ट किया है। ` सीधी सच्ची बातें ` उपन्यास भी बढ़ते हुए पूँजीवाद के प्रभाव को स्पष्ट करता है। साथ ही साथ द्वितीय विश्वयुध्द कालिन स्थिति तथा समाज में बढ़ती हुई सांप्रदायिकता की भावना का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करता है। ` सबहिं नचावत राम गुसाईं ` एक प्रतिकात्मक उपन्यास है। जिसमें बदलती हुई सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों का व्यंग्यात्मक चित्रण मिलता है। ` प्रश्न और मरीचिका ` में स्वतंत्रता के बाद के भारतीय समाज की उथल पुथल का चित्रण मिलता है। वर्माजी ने स्पष्ट शब्दों में पतित होते हुए भारतीय समाज व सामाजिक बुराईयों को हमारे सामने रखा है।

इस प्रकार भगवतीबाबू ने अपने उपन्यासों के माध्यम से पूरी शताब्दी (बीसवीं) के समाज जीवन को उसके बाहरी और भितरी ` स्वरूप ` परिवर्तन, पारिवारिक जीवन, वर्गभेद, नारी की स्थिति आदि का सजीव चित्रण प्रस्तुत किया है।

आर्थिक परिस्थिति --

किसी भी देश की आर्थिक स्थिति उस देश की उपलब्ध नैसर्गिक साधन संपत्ति, भौगोलिक वातावरण, जनसंख्या औद्योगिक विकास, शिक्षा-व्यवस्था तथा निवासियों की परिश्रम शक्ति आदि पर निर्भर करती है। और इस आर्थिक स्थिति पर ही देश का संपन्न बनना, विकासोन्मुख योजनाओं को चलाना और

8262
A.

सामाजिक स्तर को ऊँचा बनाना निर्भर होता है। सामाजिक कुरीतियाँ एवं सामाजिक समस्याओं का आधार यह अर्थ व्यवस्था ही है। आर्थिक उन्नति के साथ ही सामाजिक परिवर्तन, उसका स्वरुप, मूल्य आदि में अपने आप परिवर्तन आता है। इसप्रकार आर्थिक परिस्थितियोंका अपना महत्व है।

ब्रिटिशों के पूर्व भारत एक संपन्न देश था। कृषि प्रधान और औद्योगिक देश था। गाँव ही समृध्दि की आधारशिला थी। आवश्यक प्रत्येक वस्तु का उत्पादन गाँव में ही होता था। काशी, ढाका, कानपुर, आग्रा, सुरत, भडोच, अहमदाबाद, नागपुर, हैद्राबाद इ. नगरों का अपना विशेष महत्व था। इन नगरों मेंउद्योगधंधे विकसित थे। अंग्रेज सरकार भारत की 'हस्त-कौशल' की वस्तु एवं कपडा युरोप ले जाकर वहाँ के यंत्रों से उत्पादित सस्ता तथा रद्दी माल भारतीय बाजार में बेचता था। औद्योगिक क्रांति से इस स्थिति में और भी गति आयी। और अंग्रेजोंने भारतीय वस्तुओंपर आंतरिक टॅक्स लगाकर मुक्त विक्रय पर पाबन्दी लगा दी। परिणाम स्वरुप भारतीय लघु-उद्योग धंधे धीरे धीरे नष्ट हुए। गांवों की स्थिति बिगडने लगी। सरकार व्दारा इस स्थिति को सुधारने का कोई उपाय नहीं किया गया। फलस्वरुप खेती एवं उद्योगों का संतुलन नष्ट हुआ। देश की जनसंख्या तेजी से बढ रही थी। और आर्थिक स्थिति में सुधार नहीं हो रहा था। गांव के लोगों के सामने आजीविकाकी समस्या उठ खडी हुई, वे नगरों के प्रति आकर्षित हुए। क्योंकि अंग्रेजोंने अपने स्वार्थ के हेतु बडे बडे नगरों में उद्योग-धंधे खोल दिये थे। इस सम्बन्ध में डॉ. विमल भास्कर लिखते हैं "भारत की कृषि प्रणाली को बिगाडकर, उनके छोटे छोटे उद्योग धन्धों को समूल नष्ट कर, विदेशी धन से नये उद्योग-धन्धे स्थापित किये।"[1] अंग्रेजों की स्वार्थ परिपूर्ण नीति के इस कुठाराघात से गांव टूटे, नगर बसे। "सन १९३६ में दस लाख से अधिक जनसंख्यावाले नगरों की संख्या सात थी। यह सन

---

१ डॉ. विमल भास्कर - हिन्दी में समस्या साहित्य - पृ.सं.२३

१९४४ में बढ़कर उन्नीस की हुई ।" [१] फिर भी नब्बे प्रतिशत से अधिक लोग कृषिपर ही अवलम्बित थे। और कृषि की फसल वर्षापर निर्भर थी । वर्षा की अनियमितता, अतिवृष्टि, अनावृष्टि तथा बाढ आदि के कारण भयानक अकालों से ग्रामीण जनता पीडित रहती थी । इसके साथ ही बढते हुए कर, कमर तोड मँहगाई, दरिद्रता आदि ने तो लोगों को जिंदा ही मार दिया था । सन १८५७ के संग्राम " के बाद तो अंग्रेजोंने अपने समर्थकों को बडी जागीरें देकर जमींदारी प्रथा को प्रोत्साहन ही दिया था । अब वे कृषक वर्ग पर मनमाने अत्याचार कर, उनसे माल गुजारी इतनी अधिक लेते थे कि उनकी कमर झुककर दोहरी हो गई । अंग्रेजों के आरंभ से अंततक यही चलता रहा । इस आर्थिक स्थिति को लेकर भारतेंदु ने भारत दुर्दशा " नामक नाटक में लिखा है --

" अंग्रेज राज सुख साज, सजे सब भारी ।
पै धन, विदेश चलि जात, इहै अति ख्वारी ।।
ताहू पै महँगी, काल रोग विस्तारी ।
दिन-दिन दूने दु:ख, ईस देत हा-हा-री ।।
सब के उपर टिक्कस की आफत आई ।
हा-हा ! भारत दुर्दशा न देखी जाई ।। "

इसी प्रकार हिन्दुस्थान के दारिद्र्य सम्बन्धी भारत के प्रसिध्द अर्थशास्त्री शाह और खंबाटा ने लिखा है --" हिन्दुस्थानियों को औसत आमदनी इतनी होती है, कि तीन आदमियों की आमदनी से दो का पेट भर सकता है। उनको तीन बार खाना खाने की जरुरत होती है। तीन बार न खाकर दो ही बार खाएँ, तो इतना हो सकता है कि इन तिनों आदमियों का पेट भर जाय । लेकिन इसके लिये पहली शर्त यह है, कि वे कपडे न पहने, और न घर में रहें, बल्कि सालभर बाहर ही दिन काटें। लेकिन यह खाना भी ऐसा होना चाहिए जो

---

१ आर.बालाकृष्ण - स्टडिज इन इण्डियन इकोनोमिक प्राब्लेम -
- पृ.सं.२१९

सबसे मोटा झोटा और शारिरीक शक्ति के लिए बिल्कुल मामुली हो। `[१]

हमारे देश की आर्थिक प्रगति का अवरोध अंग्रेजी नीति के साथ ही हमारी भी कुछ कमजोरियाँ थी। स्वातंत्र्यपूर्व के कृषक पुराने परम्परागत खेती के साधनों का ही प्रयोग करता रहा था। खेती के साधनों में पशु ही प्रमुख थे, यंत्रों का प्रयोग बिल्कुल नहीं था। कृषकों की धार्मिक वृत्ति उनके सुधार में रुकावट थी। सामाजिक, धार्मिक रीति-रिवाजो, त्यौहारों आदि में फिजुल खर्ची से ऋण बढता ही जाता था। महाजनों, जमींदारों और बनियों के शोषण के कारण कृषकोंकी कमर ही टूट जाती थी। इसके साथ ही परिवार में खाने-वालों की संख्या दिन-ब-दिन बढती ही जाती थी। इसके परिणाम स्वरुप देश की जनसंख्या भी बढती गई और देश दरिद्र बनता गया। बढती जनसंख्या और घटती व्यक्तिगत आय को यह उदाहरण स्पष्ट करता है। ` सन १८८१ से १९४४ तक भारत की जनसंख्या ५५ प्रतिशत बढी, किन्तु राष्ट्रीय व्यक्तिगत आय, प्रतिवर्ष ०.५ प्रतिशत ही बढा। इसी समय जापान की जनसंख्या दुगनी हुई, फिर भी उसकी राष्ट्रीय व्यक्तिगत आय वार्षिक ४ प्रतिशत के हिसाब से बढती गयी। `[२] इस आर्थिक पिछडेपन का जिम्मेदार हमसे अधिक अंग्रेज सरकार तथा उनकी आर्थिक नीति ही थी।

म.गांधीजीने ग्रामोन्नति एवं ग्राम सुधार के हेतु तथा ग्रामीण बेकारों को स्वावलम्बी बनाने के लिए खद्दर एवं चर्खे को महत्त्व दिया। कॉंग्रेस के `स्वदेशी आन्दोलन` ने भी इसमें योगदान दिया। तो भी स्वातंत्र्यपूर्व भारत की आर्थिक स्थिति खोखाली ही बन चुकी थी। जनता कंगाल थी। उसका वह स्वार्णिम रुप, जिसके कारण अंग्रेज यहाँ आये थे, आज लोहे से भी गया बीता हो गया था। वह धरती जो सोना उगलाती थी, आज अपने लिए दो वक्त

---

१ `भारत की संपत्ति और उसकी कर उपयोगी क्षमता - (१९२४) - पृ.सं.१५२

२ `आस्पेक्टस ऑफ इकानोमिक चेंज एण्ड पालिसी इन इंण्डिया १८००-१९६० - -- पृ.सं.२३-२४

की रोटी दिलाने में भी असमर्थ थी ।

स्वतंत्रता के बाद औद्योगिक विकास हुआ और आज भी चल रहा है। फिर भी भारत वही कृषिप्रधान देश है। देश को उन्नत बनानेवाले सभी साधन-सामग्री उपलब्ध हो रहीं हैं। वह विकासोन्मुख है। आर्थिक योजनाओं को कार्यान्वित कर देश को संपन्न बनाने का हरसक प्रयास चल रहा है, फिर भी यहाँ गरीबी है। क्योंकि बढती हुई जनसंख्या तथा मँहगाई को रोकने में देश असफल सिध्द हुआ है। साथ ही साथ नैसर्गिक आपत्ति से निर्मित स्थितिपर काफी पैसा खर्च हो जाता है। बडे बडे नगरों में पूँजीपतियोंका वर्ग बढ रहा है और बढती हुई औद्योगिक बस्तियों के कारण मजदूर समस्या विकट अवस्था प्राप्त कर रही है। आर्थिक विपन्नता का एक कारण यह भी है, कि विश्व का सबसे बडा जुट उत्पादक प्रदेश और गेहुँ उत्पादन का समृध्द भाण्डार पाकिस्तान के पास चला गया है। और दुसरा कारण यह कि बढती हुई मुनाफाखोरी, कालाबाजारी ,चोर बाजारी तथा मुद्रास्फीति को रोकने में असमर्थता ।

देश की आर्थिक स्थिति में सुधार लाने के लिए तथा संपन्न बनाने के हेतु पंच वार्षिक योजनाओं का आयोजन किया गया। इसके साथ ही विस्तृत पैमानेपर आर्थिक क्रांति प्रारंभ हुई। कृषि,उद्योग,परिवहन,शिक्षा,समाज सेवा आदि सभी क्षेत्रों में संगठित योजनाओंव्दारा विकास लाने का प्रयास किया जा रहा है। निर्यात प्रोत्साहन योजनाव्दारा सरकार ने विदेश व्यापार बढाने में प्रयत्नशील है। ग्रामों में ग्रामवासियोंमें सुधारलाने के हेतु विभिन्न लाभदायक योजनाएँ कार्यान्वित हुए हैं। कृषि,आज भी जिसपर भारत संपूर्ण आर्थिक ढाँचा निर्भर करता है, उसमें सुधार लाने के लिए नव तंत्रज्ञान का प्रयोग कर उत्पादन बढाने का प्रयत्न जारी है। खाद्य-सामग्री के उत्पादन में आत्मनिर्भर बनने के लिए सिंचाई व्यवस्था पर पर्याप्त ध्यान दिया गया है। कुएँ, नहरें आदि की व्यवस्था की गई है। वैज्ञानिक ढंग को अपनाकर हर क्षेत्र में प्रगति का लक्ष्य रखा गया है। और उस दृष्टि से योजनाओं को कार्यान्वित किया गया है। तो भी नैसर्गिक आपत्ति, बढती हुई मँहगाई,बढती जनसंख्या भ्रष्ट व्यवस्था के कारण अपेक्षाकृत सफलता प्राप्त नहीं हुई है।

स्वतंत्रता के बाद जमींदारी प्रथा का उन्मूलन तथा विनोबा भावे का भूदान यज्ञ अपने आप में एक महान कार्य है । इसके साथ ही रियासतों का एकीकरण तथा रेल, जीवन बीमा एवं बैंकों का राष्ट्रीयकरण बहुत महत्त्वपूर्ण कार्य हैं । औद्योगिक विकास को प्रोत्साहन, कृषि तथा उद्योग की तरह शिक्षा समस्या की ओर ध्यान, वैज्ञानिक अनुसंधान को प्रोत्साहन तथा आवश्यक पूंजी की व्यवस्था आदि के कारण देश प्रगति की ओर तेजी से बढ़ रहा है । वहाँ कुछ रुकावटें डालनेवाली स्थितियाँ भी उत्पन्न हुईं । मात्र सरकारने समर्थता से उनपर कब्जा कर, आज हर क्षेत्र में आगे बढ़ रहा है । आज ऐसा लगता है कि हर एक को अपनी चेष्टा और योग्यता के अनुसार आर्थिक संपन्नता प्राप्त कर सुखी और संतुष्ट जीवन बिताने का सुअवसर अब दूर नहीं है ।

आर्थिक परिस्थिति और वर्माजी के उपन्यास --

भगवतीबाबू के उपन्यासों में बीसवीं शताब्दी के आर्थिक दशा का चित्रण मिलता है । बीसवीं शताब्दी भारत के औद्योगिक विकास की महत्वपूर्ण शताब्दी है । इसी समय पूँजीपति वर्ग का विकास हो रहा था । वर्माजी के उपन्यासों में हमें सर्वत्र सामाजिक जीवन में आर्थिक विषमता एवं पैसे के महत्त्व का विशद चित्रण मिलता है । आर्थिक विपन्नता से निर्मित विषम परिस्थितियों के चित्रण के साथ सामंती शोषक के वर्ग भावना तथा गाँव और नगर के निम्न मध्यवर्ग की आर्थिक विषमता से ग्रस्त अभावपूर्ण जीवन का यथार्थ चित्रण मिलता है । इसमें पूँजीपति वर्गपर व्यंग्य तथा शोषितों के प्रति सहानुभूति की भावना दीख पड़ती है।

'चित्रलेखा', 'तीन वर्ष', 'टेढ़े मेढ़े रास्ते' इन तीनों उपन्यासों में शोषक सामन्ती वर्ग भावना के चित्रण के साथ समाज में अर्थ की महत्ता को चित्रित किया है । 'टेढ़े मेढ़े रास्ते' में शोषित ग्रामों की जनता की दयनीय अवस्था का यथार्थ चित्रण झगडू तथा अन्य किसान पात्रों के माध्यम से साकार

किया है। ` आँखिरी दाँव `, ` अपने खिलौने `, ` भूले बिसरे चित्र ` में पूँजीवादी अर्थव्यवस्था से निर्मित विषम परिस्थितियों का चित्रण है। ` आँखिरी दाँव ` में आर्थिक स्थिति तथा मँहगाई से मध्यवर्गीय नगरवासियों की दशा का चित्रण किया है। ` अपने खिलौने ` में अर्थ संपन्न उच्चवर्ग की भ्रष्टाचारपर प्रकाश डाला है। ` भूले बिसरे चित्र ` में सन १८८५ से १९३० तक के आर्थिक स्थिति का चित्रण हुआ है। वर्माजीने इसमें मध्यवर्ग के पात्रों के माध्यम से भारत की तत्कालीन आर्थिक दुर्दशा का चित्र खिंचा है। साथही बढते उद्योग धन्धे तथा अंग्रेजों की विलासिता का चित्रण किया है। गरीबी, शिक्षित बेकारी की समस्या का भी सजीव अंकन हुआ है। इसके साथ ही ग्रामीण महाजनों, उद्योगपतियों तथा बनियों का विकास तथा शोषण की प्रवृत्ति का यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया है। ` थकेपाँव ` में मध्यवर्ग को आर्थिक विषमता से निर्मित स्थिति का चित्रण है। ` रेखा ` उपन्यास में देवकीराम की माध्यम से अर्थ की महत्ता का चित्रण हुआ है। ` सीधी सच्ची बाते ` में पूँजीवादी अर्थव्यवस्था केविकास के साथ कालाबाजारी, अकाल, भूखमरी आदि का चित्रण किया है। इसमें द्वितीय विश्वयुध्दकालिन आर्थिक परिस्थितियोंका व्यापक चित्रण मिलता है। आर्थिक परिस्थितियों में ही पूँजीवाद का बढता प्रभाव तथा समाजवाद की असफलता का चित्रण किया है। ` सबहिंनचावत राम गुसाईं ` में व्यक्ति की बढती हुई अर्थ लोभ ` का चित्रण है। राधेश्याम बनिया को तो अधिक से अधिक धन कमाने की ही चिंता है। इसमें पैसे की अमोघ शक्ति की महत्ता का चित्रण मिलता है। ` प्रश्न और मरीचिका ` में वर्माजीने आर्थिक संघर्ष तथा अर्थलोभ से निर्मित आज की मूल्य हीनता का चित्रण किया है। हर एक धन के पिछे ही भाग रहा है, इसे पाने में वह अपने आप को बेच दिया है, स्वतंत्र भारत को इस आर्थिक स्थिति का सजीव अंकन अत्यंत मार्मिकता से हमारे सामने प्रस्तुत किया है। अर्थपर आधारित धार्मिक आडम्बरोंका चित्रण ` सामर्थ्य और सीमा ` तथा ` सबहिंनचावत राम गुसाईं ` में सजीव रुपमें किया है।

स्वँतन्त्रतापूर्व के भारत की आर्थिक परिस्थितियों का सफल चित्रण ` भूले बिसरे चित्र `, ` टेढे मेढे रास्ते `, ` सीधी सच्ची बातें ` आदि उपन्यासों में मिलता है, तो स्वँतत्र भारत की आर्थिक स्थिति का यथार्थ चित्रण ` थके पाँव ` ` सामर्थ्य और सीमा `, ` सबहिं नचावत राम गुसाईं ` प्रश्न और मरीचिका ` आदि उपन्यासों में सफलता से हुआ है।

इसप्रकार वर्माजी के उपन्यासों में समाज जीवन में व्याप्त आर्थिक विषमता एवं पैसे का महत्त्व चित्रित है। परतंत्र भारत में अँग्रेजशोषक तो स्वतंत्र भारत में पूँजीपति। पूँजीपतियों की शोषक अर्थनीति के कारण आर्थिक विषमता बढती जा रही है। वर्माजी के उपन्यासों में प्रमुखत: देश की इसी अर्थ स्थिती के चित्रण में पैसे का महत्त्व ही सर्वत्र चित्रित हुआ है। अर्थलोभ से निर्मित मूल्यहीनता का भी चित्रण यत्र-तत्र दिखाई देता है।

धार्मिक एवं सांस्कृतिक परिस्थिति --

भारतीय समाज ब्रिटिशों के आगमन पूर्व, सामन्ती व्यवस्था, राजनीतिक अस्थिरता एवं नैसर्गिक आपत्तियों से अपरिवर्तनशील बन चुका था। प्रकृति से पराजित व्यक्ति भाग्यवादी बन चुका था। वैज्ञानिक चिंतन का अभाव था। अत: प्रत्येक घटना तथा परिवर्तन ईश्वर की इच्छा ही मानी गई थी। धार्मिक दृष्टिकोण प्रधान था। " विशेषत: भारतीय जीवन दृष्टिकोण का निर्माण धर्मशास्त्र, परम्परागत विचार तथा सामाजिक रुढियों द्वारा निश्चित होता था। व्यक्ति के लिए धर्मशास्त्रों का प्रत्येक शब्द अन्तीम सत्य था।" १ मध्ययुगीन भारत में व्यक्ति, समाज तथा राज्य की अपेक्षा धर्म ही प्रमुख था। हिंदु धर्म में तो लौकिक जीवन की अपेक्षा पारलौकिता पर अधिक बल दिया गया था। व्यक्ति का सर्वसामान्य आदर्श आध्यात्मिकता पारलौकिकता तथा मोक्ष प्राप्ती था। इसलिए ईश्वर को सर्व शक्तिमान माना गया था।

प्राचीनतम संस्कृति एवं धर्म पर भारतियों को गर्व होना स्वाभाविक था। परंतु विदेशी संस्कृति का भारत प्रवेश राजनीतिक अधिपत्य के बलपर हुआ, जिससे

१. डॉ. चण्डीप्रसाद जोशी-हिंदी उपन्यास-समाजशास्त्रीय विवेचन-पृ.सं. ९७

कहने सुनने का मौका ही नहीं दिया और अंग्रेजों ने अपने साथ व्यापारिक लाभकारी वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ ही नीति धर्म प्रचारक मिशनरियों को भी लाया था। परिणाम स्वरूप दोनों संस्कृतियों में संघर्ष के देशव्यापी परिवर्तन की लहर दौड उठी। कवि दिनकर का इस सम्बन्ध में कथन है " यह सांस्कृतिक नवोत्थान सबसे अधिक शक्तिशाली और श्रेष्ठ था।[१] " ईसाई धर्म के प्रचार ने भारतीय समाज में प्रचलित धार्मिक आस्थाओंपर प्रहार किया। भारतीय धर्म की कठोरता से क्षुब्ध व्यक्ति ईसाई धर्म स्वीकार करने लगा। हिन्दुत्व की रक्षा के लिए भारतीय शिक्षित वर्ग के चिन्तकोंने प्राचीन जर्जर रूढियों व कुप्रथाओंपर प्रहार कर जनता को जागरूक किया।`[२] फलस्वरूप सुधारवादी आन्दोलनों की बाढ सी आयी। अनेक धार्मिक एवं सामाजिक संस्थाओंने समाज में परिव्याप्त अंधविश्वासों, धार्मिक आडम्बरों तथा अनास्था के प्रति आन्दोलन चलाये। इनमें विशेषत: ब्राह्मो-समाज, प्रार्थना समाज, आर्यसमाज रामकृष्ण मिशन तथा थियोसॉफिकल सोसायटी आदि के नाम उल्लेखनिय हैं। चिन्तकों में राजाराम मोहन रॉय, दयानंद सरस्वती, रानडे, रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानंद, म.गांधी आदि के नाम विशेष उल्लेखनिय है। इन्होंने अपने समाजों व्दारा भारतीय संस्कृति के सभी उपयोगी तत्वों को आकर्षक रूपों में जनता के सम्मुख रखकर सांस्कृतिक आत्मगौरव और आत्मविश्वास की भावना को जागृत किया। राजाराम मोहन रॉय से गांधीजी तक के सभी चिंतक धार्मिक संकुचितता से मुक्त थे। इनमें सर्वधर्मसमवाय की भावना बलवती थी।` राजाराम मोहन रॉय` ने समानाधिकार से बोल सकें, ऐसा तिनों धर्मोंका गहन अध्ययन किया था।[३]` हिन्दुत्व की पवित्रता इस्लाम की रुचि और विश्वास तथा ईसाइयत की सफाई ( तर्क ) उन्हें बेहद पसंद थी।`[४] आगे पाश्चात्य

---

१ कवि दिनकर - संस्कृति के चार अध्याय - पृ.सं.४४६

२ डॉ.सुमित्रा त्यागी - स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य में जीवन दर्शन - - पृ.सं. २६

३ डॉ.अमरसिंह लोधा - प्रेमचंदोत्तर हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक चेतना - - पृ.सं.३९

४ कवि दिनकर - संस्कृति के चार अध्याय - पृ.सं.४४९-४५०

साम्राज्यवाद के कारण राजनीतिक स्वतंत्रता ढढतम् होने से प्रत्येक विदेशी वस्तु का बहिष्कार तथा धिक्कार किया गया। अंग्रेजों की "मुस्लिम लीग" को प्रोत्साहित करने की नीति तथा मं.जीन्ना जैसे मुसलमान नेताओं के कारण हिन्दु मुस्लिमों में घृणा भाव बढता गया। जिसका परिणाम आज भी सांप्रदायिक संघर्ष के रुपमें दिखाई देता है।

मात्र इतना सत्य है कि, नवीन औद्धिक उन्मेष एवं चिंतन के फलस्वरुप समाज में नव चेतना का जन्म हुआ। परिणाम मध्ययुगीन सांस्कृतिक मूल्य, धार्मिक दृष्टिकोण तथा अंधविश्वास ध्वस्त हो गये। और यहाँ तक आते आते प्रेमचंद के इस कथन को जनता ने सत्य कथन के रुपमें स्वीकारा "धर्म का मुख्य स्तंभ भय है। अनिष्ट की शंकर को दूर कर दीजिए फिर तीर्थयात्रा, पुजापाठ, स्नान-ध्यान, रोजा-नमाज, किसी का निशान भी न रहेगा। मसजिदें खाली नजर आयेंगी और मन्दिर वीरान्।"[१]

इसी बीच धर्म के नामपर प्रचलित रुढीवादी दृष्टिकोण के प्रति तिरस्कार का भाव उठने लगा था और जनता का धर्मपर का विश्वास भी हटने लगा था। क्योंकि "रुसीक्रांति" ने केवल रुस को ही प्रभावित न कर एशिया को भी व्यापक पैमानेपर प्रभावित किया था। मार्क्सवादी विचारधारा से सारा विश्व प्रभावित हो रहा था। इसीसे धर्म तथा ईश्वर पर प्रश्न चिन्ह लगा। कार्ल मार्क्स ने अपने विचारों को वैज्ञानिक पृष्ठभूमि देकर सामाजिक परिवर्तन पर जोर दिया था। "मार्क्सवाद का दार्शनिक सिध्दान्त व्दन्व्दात्मक भौतिकवाद है। जो वर्ग संघर्ष पर आधारित है - एक है शोषक, दुसरा है शोषित। शोषक समाज में आर्थिक एवं राजनीतिक शासन करता है। शोषित अपने शारीरिक श्रमफल से भी वंचित रहता है। इसीसे शोषक शोषित वर्ग में संघर्ष अनिवार्य हो जाता है।"[२] इस का प्रभाव भारतपर

---

१ प्रेमचंद - रंगभूमि - (प्रथम भाग) पृ.सं.१०१

२ डॉ. धीरेन्द्र वर्मा - हिन्दी साहित्य कोश - पृ.सं.५९०-५९१

भी पडा । भारत में कम्युनिस्ट पार्टी ने समाजवादी साहित्यव्दारा स्वातंत्र्यपूर्व समय में जनप्रिय बनाने का कार्य किया । इसके साथ ही शिक्षित वर्गपर फ्रायडवाद तथा युंग-एडलर की मनोवैज्ञानिक मनोविश्लेषणात्मक पध्दति का भी प्रभाव पडा। इसीसे आध्यात्मिकता की जगह भौतिकता का महत्त्व बढा । परंतु आगे भारत की धर्मनिरपेक्षता के कारण समन्वय का भाव दृष्टिगत हुआ और विश्वबन्धुत्व एवं विश्व-शांती-भावना को प्रेरणा मिली ।

अंग्रेजी शिक्षा नीति के कारण भारत में शिक्षित तथा अशिक्षित दो भिन्न सांस्कृतिक वर्गों का जन्म हुआ दोनों के बीच रहन सहन, रीति-रिवाज, यातायात, जीवनादर्श आदि में काफी अंतर आया । नगरवासी भौतिक सुख-सुविधाओं से संपन्न थे । वे अपने आपको मॉडर्न कहलाने लगे, तो ग्रामवासी साधनहीन, प्राचीन परम्परा में अभाव ग्रस्त, गाँव का कठोर जीवन अंधविश्वास में ही जी रहा था । "इसीसे ग्रामीण जीवन की नीरसता तथा कठोरता से ऊबे हुए, थोडीबहुत शिक्षा प्राप्त ग्रामीण युवक, वैज्ञानिक विभूतियों से सुसज्जित नगरों में ही रहना चाहता और गाँव को लौटना उन्हें खलता ।"[१] भौतिक साधनों से संपन्न नगरवासी अपने अधिकारों के लिए जागरुक रहा था । वे ही लोग विभिन्न आन्दोलनों के सूत्रधार रहें । इसी काल में गांधीवाद का पूर्ण प्रभाव रहा । संसार का ध्यान भी गांधीजी की ओर रहा । "नैतिकता पर आधारित सत्य अहिंसा और प्रेम के सिध्दान्तोंव्दारा गांधीवाद ने भारत के इस नये सांस्कृतिक आन्दोलन के प्रति विदेशों में उत्सुकता उत्पन्न की । प्रत्येक क्षेत्र में नैतिकता, शुध्द साधन एवं साध्य की आवश्यकता, मानवीय उच्चादर्शों का आदर मानवतावादी दृष्टिकोण एवं विश्वबंधुत्व की भावना में गांधीवाद अग्रदूत रहा ।"[२] इसी युग में भारतीय संस्कृति की उच्चतम भावना 'वसुदेव कुटुंबकम्' का चरमोत्कर्ष हुआ । म.गांधी, रवीन्द्र, अरविंद तथा इकबाल आदि चिन्तकों ने अपने विचारों

---

१ आचार्य नरेन्द्रदेव - राष्ट्रीयता और समाजवाद - पृ.सं.३१६

२ डॉ.अमरसिंह लोधा - प्रेमचंदोत्तर हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक चेतना - - पृ.सं.४१

से विश्वबन्धुत्व की भावना को बढ़ावा दिया । किन्तु अंग्रेजी नीति ` फूटडालो और राज्य करो ` के कारण भारतीय संस्कृति को इन्कार कर ` हिन्दु संस्कृति ` और ` मुस्लिम संस्कृति ` के रूप में विभाजन कर सन १९४७ में देश स्वतंत्र हुआ । स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी भारत भारत ही रहा सर्वधर्म समन्वयकारी । म.गांधी में तो धार्मिक समन्वय की परिणति है । इन्होंने वैष्णव जन की सबसे बडी विशेषता ` पराई पीर जानना ` बतलाया है । उनके अनुसार वहीं वैष्णव जन है, भगवान का भक्त है, जो पराई पीर जानता है । धीरे धीरे औद्योगिक विकास तथा आर्थिक प्रगति के कारण मानवतावादी विचारों से निम्नशोषित वर्ग को महत्व दिया जाने लगा । मानवतावादी भावनाने ही जाँत-पाँन्त, छुआछुत के विरोध में आवाज उठाई । आज राष्ट्रीय एकता की माँग ने धर्म का रूप ही बदल गया है ।

स्वतंत्रता के बाद भारत धर्म निरपेक्ष नवराष्ट्र के रूप में विश्व में सम्मानित हुआ । सांप्रदायिक प्रवृत्ति का निर्मूलन करने के लिए कारगर कदम उठाए गए । जनतंत्र शासन प्रणाली चल रही है । मात्र बीच बीच में उसकी धर्मनिरपेक्षता बनाये रखने के लिए उसे बाह्य तथा आंतरिक शक्तियों से सामना करना पडता है । विशेषता भाषावार प्रांत-रचना के कारण भाषा भेद समस्या उठ खडी हुई थी , जिससे राष्ट्रीय एकता में बाधा आयी । देश में इस प्रांतीय वैरभाव तथा संकुचित राष्ट्रीयता को फैलाने में - ` मुस्लिम लीग ` हिन्दु महासभा, जनसंघ, आर.एस.एस. दक्षिण पंथी सांप्रदायिक एवं वामपंथी आदि दल आगे रहे । परंतु भारतीय संस्कृति की सहिष्णुता की भावना इन पर मात कर गयी । इस भावना का प्रतिबिम्ब अन्तराष्ट्रीय क्षेत्र में भारत की विदेशनीति में दृष्टिगत होता है । भारत ने विश्व के प्रश्नों में प्रारंभ से ही ` तटस्थता नीति ` को अपनाया और विश्वशांती का अग्रदूत रहा । नीडरता से भारत ने नाटो`, ` सेन्टो` और ` सीटो ` के सैनिक समझौते का तथा पाकिस्तान को अमरिका व्दारा दी गई शस्त्रास्त्र सहायता का जोरदार विरोध किया । आज भी इस का वह विरोध करता आ रहा है । विश्व में

शांती बनाये रखने में ` सहअस्तित्व ` का सिध्दान्त पं.नेहरूजी ने विश्व को दिया। इसके मूल में ` जिओ और जीने दो ` की भावना थी। विश्व के राजनीतिज्ञों ने पं.नेहरू को एशिया के नेता एवं शांतीदूत के रूप में स्वीकारा। चीन - आक्रमण के बाद चीन के साथ हुए शांती समझौते में ` पंचशील ` तत्व उभर आयें।

इसी बीच भाषा के आधारपर राज्यों के बंटवारे से प्रादेशिकता का प्रश्न उभर आया। प्रदेश की सांस्कृतिक विशेषताओं को अधिक महत्व दिया जाने लगा। जिससे राष्ट्रीय ऐक्य में क्षति पहुँची। आंतरिक क्षोभ बढने लगा। ` हिन्दी ` का विकास नहीं हो पाया। कुछ आकस्मिक घटनाएँ भी उभर आयी। जिनमें सांप्रदायिक व राजनीतिक दंगे, हडतालें, पाकिस्तान की भारत से शत्रुता इ.प्रमुख घटना थीं। परंतु राष्ट्रीयता का स्त्रोत हमारी संस्कृति की नींव में ही है।` "हमारी विभिन्न भाषाओंके भीतर ही यह एकता प्रवाहित थी। भारतीय संस्कृति एवं दर्शन के अमर ग्रंथ ` रामायण, ` महाभारत ` एवं अन्य ग्रंथ जो संस्कृत, पाली आदि में होते हुए वर्तमान भारत की सभी भाषाओं तथा लिपियों में भी यही राष्ट्रीय भावना ग्रंथित है।" [१]

आज का युग आण्विक युग रहा है। भारत ने भी भौतिकवादी वैज्ञानिक दृष्टि को अपनाकर देश की समृध्दि के लिए प्रयत्नशील हैं। भारतीय जन - जीवन की ग्राम संस्कृति व नागरी संस्कृति के बीच अधिक निकटता लाने की दृष्टिसे, वैज्ञानिक सुविधाओं व्दारा अंतर कम करने का भी प्रयास जारी है। वैविध्यपूर्ण सांस्कृतिक कार्यक्रमोंव्दारा राष्ट्रीय ऐक्य भावना को भी बनाये रखने की कोशिश की जाती है। किन्तु आज भी बीच बीच में सांप्रदायिक दंगे उभर आते हैं। हिन्दु मुस्लिम वैर भाव का सहारा लेकर सांप्रदायिक दंगे उभारनेका

---

१ कवि ` दिनकर ` संस्कृति के चार अध्याय ` - पृ.सं.६५७-६५८

प्रयास होता है। आज भी दोनों में संशय की भावना विद्यमान है। लगता है धार्मिक जोश में अंधे होकर मानवीयता को बिलकुल ही भुला दिया जाता है।

धार्मिक एवं सांस्कृतिक परिस्थिति और वर्माजी के उपन्यास --

भगवतीबाबू के उपन्यासों में हमें उन्नसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध और बीसवी शताब्दी के धार्मिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों की व्यापक झाँकी देखने को मिलती है। विशेषत: आर्य समाज इस्लाम सनातन धर्म, ईसाई धर्म आदि का संघर्ष चित्रित हुआ है। इसके साथ ही किस प्रकार अंग्रेजोंने अपने स्वार्थपूर्ति के लिए हिन्दु मुस्लिम समस्या खडा करके अंतत: देश-विभाजन करके स्वतंत्रता दी, इसका यथार्थ चित्रण मिलता है। धार्मिक कट्टरता, राजनीतिक तथा आर्थिक स्वार्थोने हिन्दु-मुस्लिम के बीच जो खाई निर्माण किया उनका भी यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है। विशेषत: भूले बिसरे चित्र, सीधी सच्ची बाते, सामर्थ्य और सीमा तथा प्रश्न और मरीचिका आदि उपन्यासों में यत्र तत्र इनका सुंदर चित्रण मिलता है।

भगवतीबाबू के उपन्यासों में धर्म का कोई तात्त्विक विवेचन नहीं है। हिन्दु मुस्लिम समस्या के रुपमें ही उसका व्यापक पैमानेपर चित्रण हुआ है। वर्माजी के बहुतांश उपन्यासों में हिन्दु मुस्लिम संकीर्णता का चित्रण मिलता है। `भूले बिसरे चित्र` में मुंशी रामसहाय व्दारा युगीन धार्मिक जीवन की यथार्थ झाँकी प्रस्तुत की है। साथ ही तत्कालीन सांप्रदायिक युग जीवन का चित्रण देखने मिलता है। प्रथम दो खण्डों में सनातनी धार्मिक दृष्टिकोण का चित्रण हुआ है। तो तिसरे खण्ड में हिंदु मुस्लिम सांप्रदायिकता की कटुता चित्रण मिलता है। `भूले बिसरे चित्र` में आर्य समाज की प्रगतिवादी विचारधारा से प्रभावित युग को दिखाया है। इसके अतिरिक्त अपने `खिलौने`, `सामर्थ्य और सीमा`, `सबहिं नचावत राम गुसाई` आदि उपन्यासों में धर्म के नामपर होनेवाले

शोषण का चित्रण मिलता है। विशेषत: पूँजीपतियों धर्म के नामपर गरिबोंका जो शोषण करते हैं, उसपर वर्माजीने व्यंग्य प्रहार किया है। साथ ही धर्म के विकृत रुपपर भी गहरा आघात किया है। वर्माजी ने अपने उपन्यासों में धार्मिक स्थिति के चित्रण में हिन्दु तथा मुस्लिम दोनों धर्मों की कमजोरियों का यथार्थ चित्रण किया है।

भगवतीबाबू के उपन्यासों में पाश्चात्य तथा भारतीय सांस्कृतिक संघर्ष का चित्र भी उभर आया है। 'भूले बिसरे चित्र', 'टेढे मेढे रास्ते', 'सीधी सच्ची बातें' आदि उपन्यासों में सन १८८५ से लेकर सन १९४८ तक की धार्मिक सांस्कृतिक परिस्थितियों की सुंदर अभिव्यक्ति हुई है। वर्माजीने 'भूले बिसरे चित्र' तथा 'टेढे मेढे रास्ते' में सांस्कृतिक विडम्बना और संघर्ष की यथार्थ झाँकी प्रस्तुत की है। पाश्चात्य शिक्षा दिक्षा ने भारत में शिक्षित और अशिक्षित दो भिन्न सांस्कृतिक वर्गोंका निर्माण किया। साथ ही नागरी और ग्रामीण सांस्कृतिका भी निर्माण हुआ था। जहाँ एक और नागरी संस्कृति में भौतिक साधनोंसे संपन्नता आयी थी वहाँ दुसरी और ग्रामीण संस्कृति में अभाव ग्रस्तात थी। गांव के लोग भौतिक सुख सुविधाओं से दूर कठोर जीवन व्यतीत कर रहे थे और अंध विश्वास आदि से बुरीतरह ग्रस्त भी थे। इसका सुंदर चित्रण भी वर्माजी के उपन्यासों में यत्र तत्र मिलता है।

'सामर्थ्य और सीमा', 'सबहिं नचावत राम गुसाईं' 'प्रश्न और मरीचिका' आदि उपन्यासों में स्वातंत्र्योत्तर भारत की सांस्कृतिक परिस्थितियोंका सफल चित्रण मिलता है। इसके साथ ही 'रेखा' भूले बिसरे चित्र' में मानवीय आस्था अनास्था के व्दन्व्दात्मक चित्रण तथा नयी संस्कृति नयी सभ्यता को अभिव्यक्त किया है। गांधीवादी आदर्शों और जीवन मूल्यों के व्दारा प्रेरित सांस्कृतिक उपलब्धीपर भी दृष्टि डाली है। ग्रामीण सामान्य जन जीवन का चित्रण वर्माजी के उपन्यासों में बहुत ही कम है। मात्र 'आखिरी दाँव' 'सीधी सच्ची बातें' तथा अन्य अनेक उपन्यासों में उसकी आंशिक झाँकी अवश्य मिलती है।

वर्माजी के अधिकतर उपन्यासों में अभिजात्य वर्ग की संस्कृति का चित्रण मिलता है। जिसमें उच्च वर्ग तथा मध्यवर्ग के जन संस्कृति का चित्रण प्रमुख है। अभिजात्य वर्गीय संस्कृति के चित्रण में वर्माजी ने राजा-महाराजाओं, बड़े सरकारी अफसरों, पूँजीपतियों तथा व्यापारियों के विलासिप्रवृत्ति का चित्रण किया है। विशेषता पाश्चात्य अंधानुकरण का चित्रण कर नई रूढ़ियों की स्थापना की है। मात्र इसमें नारी वर्ग का नैतिक पतन ही अधिक दिखाया देता है। ' अपने खिलौने ' में इसका यथार्थ चित्रण मिलता है। नगर संस्कृति की आर्थिक विषमता से दूषितता का चित्रण अधिकतर मिलता है।

इस प्रकार वर्माजी के उपन्यासों में धार्मिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों का चित्रण तथा उनसे निर्मित समस्याओं का चित्रण मिलता है। साथ ही इनके उपन्यासों में आर्य समाज की प्रगतिवादी विचारधारा की अभिव्यक्ति का दर्शन होता है। विशेषता धार्मिक संप्रदायों की गतिविधियाँ तथा उनसे निर्मित सांस्कृतिक स्थिति का सफल चित्रण मिलता है।